इकाई 13 उपनिषद्

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 उपनिषद् का अर्थ

13.3 उपनिषद् की परिभाषाएँ

13.4 प्रमुख उपनिषद्

13.5 सारांश

13.6 शब्दावली

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.8 बोध/ अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

संस्कृत में ''आयुर्वेद के मूल आधार'' पाठ्यक्रम से सम्बन्धित तीसरे खण्ड की यह पहली इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आपः

- उपनिषदों का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
- उपनिषदों का प्रतिपाद्य विषय जान सकेंगे।
- प्रमुख उपनिषदों से परिचित होंगे।
- उपनिषद् ज्ञान के स्रोत क्यों है, जान पायेंगे।
- भारतीय दर्शन में व्याप्त आध्यात्मिकता को जान सकेंगे।
- 'दर्शन' के क्षेत्र में ज्ञान, रूचि, उत्साह का विस्तार कर सकेंगे।
- उपनिषदों का अध्ययन कर अपने शब्दों में व्यक्त कर पायेंगे।
- 'तैत्तिरीयोपनिषद्' की तृतीयवल्ली को आसानी से समझ पायेंगे।

13.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई उपनिषद् से सम्बन्धित हैं। उपनिषद् भारतीय आध्यात्मिक चिंतन के मूलाधार है जिन्हें 'ब्रह्मविद्या' नाम से भी जाना जाता है। वैदिक वाड्.मय में संहिता ब्राह्मण, आरण्यक के पश्चात् 'उपनिषद' का स्थान हैं। वेदों का सार ही उपनिषदों का विषय है। मनुष्य एक जिज्ञासु जीव है, जिसके मन में लगातार असंख्य प्रश्न उठते रहते हैं कि – सृष्टि कैसे हुई ? किसके द्वारा हुई ? आत्मा का अस्तित्व वास्तव में है क्या ? परमात्मा है क्या ? परमतत्व है तो उत्पत्ति किसके द्वारा, कब और कैसे हुई ? क्या पुनर्जन्म होता है ? मरने के बाद क्या होता है ? आत्मा है तो उसकी स्थिति मरने पर कहाँ होती है इत्यादि–इत्यादि। उपनिषदों में उपरोक्त वर्णित जिज्ञासाएँ तथा अन्य भी जिज्ञासाओं के निवारणार्थ ऋषियों द्वारा खोजे गए उत्तर है, जो अनेक वर्षों

के गंभीर चिंतन, मनन का परिणाम हैं। उपनिषदों को बोधगम्य बनाने के लिए शंकराचार्य द्वारा इन पर भाष्य लिखा है, जो उपनिषदों के गूढ़ रहस्यों को सरल शैली में हमारे सम्मुख रखते हैं।

यद्यपि प्रत्येक दर्शन ने अपना वर्ण्य विषय उपनिषद् में ही खोजा है, अतः उपनिषद् प्रत्येक दर्शन का उद्गम् स्थल है परन्तु वेदान्त का सम्पूर्ण कलेवर ही उपनिषद् हैं। डॉ. हरिदत्त शास्त्री ने वेदान्त को उपनिषद् के सुपुत्र की संज्ञा (उपमा) दी हैं। पिता–पित्र के पारस्परिक अन्तर के समान वेदांत और उपनिषद् में थोड़ा–सा विभेद हैं। उपनिषदों में जो सिद्धान्त यत्र–तत्र असम्बद्ध अवस्था में उपलब्ध हैं, तर्क की कसौटी पर कसने का तरीका वेदान्त में अलग है, वहाँ उन्हीं सिद्धान्तों को सुसम्बद्ध क्रम में, तर्क द्वारा स्थापित किया है –

वेदान्तवाक्यकुसुमग्रथनार्थत्वात् सूत्राणाम्

वेदान्तवाक्यानि हि सूत्रेरूदाद्वत्य विचार्यन्ते (ब्रह्मसूत्र शाङकरभाष्य)

वेदान्त दर्शन का परिचायक सर्वप्रथम ग्रन्थ 'वेदान्तसूत्र' है, जिसे 'ब्रह्मसूत्र' भी कहा जाता है। बादरायण द्वारा विरचित 'ब्रह्मसूत्र' ज्ञानकाण्ड प्रधान है जिसे उत्तर मीमांसा कहा जाता है जबकि पूर्व मीमांसा कर्मकाण्ड प्रधान हैं।

सूत्र 1.1.2 जन्माद्यस्य यतः अर्थात् इस सूत्र में जगत के जन्म आदि (उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय) जिससे होते हैं, वह ब्रह्म हैं। संसार को उत्पन्न करने में, स्थिति में तथा प्रलय का मूल कारण ब्रह्म को ही बताया है। 'जन्माद्यस्य' के शारीरिक भाष्य में शंकराचार्य ने अद्वैत स्वरूप ब्रह्म की निम्न परिभाषा दी है –

''अस्य जगतो नाम रूपाम्यां व्याकृतस्य अनेककृत भोद्रमतृसयुस्य प्रतिनियतदेशकाल निमित क्रिया फलाश्रयस्य मनसा अपि अचिन्त्यरचनारूपस्य जन्मस्थिति भंग यतः सर्वज्ञात् सर्वशक्तेः करणाद भवदि, तद् ब्रह्म'' (ब्रह्मसूत्र शा.भा. 01.01.02)

अर्थात् नाम, रूप से अव्यक्त, अनेक कलाओं व भावनाओं से युक्त ऐसे क्रिया और फल के आश्रय देश, काल, निमित्त व्यवस्थित है, मन से जिसकी रूप रचना का विचार नहीं किया जा सकता, ऐसे जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय में वह सर्वज्ञ, शक्तिमान बल ही कारण है। अतः ब्रह्म सर्वव्यापक, अधिष्ठान, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, शुद्ध, चैतन्य, एक, नित्य व कूटस्थ परमतत्व है। वेदान्त सूत्रों का अधिष्ठान उपनिषद् है। उपनिषदों में मुख्य रूप से ब्रह्म के स्वरूप का प्रतिपादन किया गया है। विविध आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए जब मनीषियों ने एकांत में ध्यान योग से निदिध्यासन किया, तब उन्होंने एक देवात्म शक्ति को देखा। इसी शक्ति को उन्होंने सत्, चित्, आनंद या ब्रह्म नाम से पुकारा (अखण्डं सच्चिदानन्दमवाड्. मनसगोचरम् – वेदान्तसार)। इस ब्रह्म को अलग–अलग रूप देकर अलग–अलग उपनिषदों में विवेचन किया।

वैदिक वाड्.मय की श्रृंखला में संहिता, ब्राह्मण ,आरण्यक और अन्त में ''उपनिषद्'' आते हैं। इसी क्रम में अन्त में आने के कारण यह 'वेदान्त' भी कहे जाते हैं। उपनिषद् ज्ञानकोष कहे जाते हैं क्योंकि यह ऐसे विचार व उपदेश है जो व्यक्ति की दार्शनिक जिज्ञासा शांत कर सत्य के पथ पर अग्रसर करते हैं।

13.2 उपनिषद का अर्थ–

उपनिषद् शब्द उप और नि उपसर्ग, सद् धातु, क्विप प्रत्यय लगाकर बना है। ' उप्' का अर्थ है समीप, 'नि' का अर्थ है निश्चयपूर्वक या निष्ठापूर्वक और सद् का अर्थ है – बैठना अर्थात् गुरू के समीप निष्ठापूर्वक बैठकर ज्ञान की प्राप्ति करना। आदि शंकराचार्य ने कठोपनिषद् के शांकरभाष्य में सद् धातु के तीन अर्थ बताये हैं – 'सदेर्धातोर्विशरणगत्यवसादनार्थस्य' (1) विशरण का अर्थ होता है नाश होना अर्थात् जिसके द्वारा मनुष्य की अविद्या का नाश होता है। (2) गति – गति का तात्पर्य है पाना या जानना अर्थात् जिसके द्वारा ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति होती है अथवा परमतत्व को जाना जाता है। (3) अवसादन – अवसादन का अर्थ है शिथिल होना अर्थात् वह विद्या जिसके द्वारा मनुष्य के दुःखों में शिथिलता आती है या नाश होता है।

उपरोक्तानुसार यह सिद्ध होता है कि उपनिषद् वह विद्या (ज्ञान) है जिससे व्यक्ति की अविद्या (अज्ञान) का नाश होता है, परमतत्व (ब्रह्म) की प्राप्ति और दुःखों का नाश होता है। जिस विद्या को पाकर व्यक्ति जीवन और मुत्यु के चक्र से छुटकारा पाता है। पाप अथवा अज्ञान नाश कर जो हमें सच्चा ज्ञान करायें, वही उपनिषद् है। सच्चा ज्ञान से तात्पर्य जिस ज्ञान को प्राप्त कर जन्म और मुत्यु के बंधन से छुटकारा मिले क्योंकि भारतीय संस्कृति के चार पुरूषार्थों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) में 'मोक्ष' से ही सम्बन्धित है 'उपनिषद'। अतः वह तत्वज्ञान जिसे पाकर मनुष्य 'मोक्ष' प्राप्त करे वही उपनिषदों का ध्येय है। जिसके द्वारा ब्रह्म की समीपता निश्चित ही प्राप्त हो उसे उपनिषद् कहा जाता है –

''उप ब्रह्म सामीप्यं निश्चयेन

सीदति प्राप्नोति यथा सा उपनिषद्।''

13.3 उपनिषद की परिभाषाएँ–

भारतीय और पाश्चात्य विभिन्न विद्वानों ने उपनिषद् की विविध परिभाषाएँ दी है जो निम्न रूपेण है :–

अष्टाध्यायी में जीविकोपनिषदावौपम्ये सूत्रानुसार (1.4.49) उपनिषद् शब्द परोक्ष अथवा रहस्य के अर्थ में हुआ है।

अमरकोश (3.99) में 'धर्मेरहस्युपनिषत् स्यात्' अर्थात् उपनिषद् शब्द गूढ़, धर्म और रहस्य के अर्थ में प्रयुक्त होता है इसलिए उपनिषद् को परोक्ष या रहस्यमय ज्ञान का स्रोत कह सकते हैं।

ओल्डनवर्गने उपनिषद् का अर्थ पूजा की एक पद्धति भी किया है।

19वीं शताब्दी में जर्मन विद्वान शोपेनहर (Schopenhauer) को उपनिषदों में रूचि हुई और उन्होंने उपनिषदों का अनुवाद किया। उनका कथन है –

"In the world there is no study --------- so beneficial and so elevating as that of upanishads ------- (they) are a product of the highest wisdom -------- it is destinated sooner or later to become the faith of the people"

अर्थात् सारे संसार में ऐसा कोई स्वाध्याय नहीं है जो उपनिषदों के समान उपयोगी और उन्नति की ओर ले जाने वाला हो। वे उच्चतम बुद्धि की उपज है। आगे या पीछे एक दिन ऐसा होना ही हैं कि यही जनता का धर्म होगा।

Maxmuller - "The upnishads are the sources of the Vedant Philosophy, a system in which human speculation seems to me to have reached its very acme."

अर्थात् उपनिषद् वेदान्तदर्शन के आदिस्त्रोत है और ये ऐसे निबन्ध हैं जिनमें मुझे मानवी भावना अपने उच्चतम शिखर पर पहुँच मालूम होती हे।

इस प्रकार उपनिषद् शब्द का अर्थ रहस्य ज्ञान या ब्रह्म ज्ञान या अध्यात्म विद्या का ज्ञान है। शंकराचार्य ने 'उपनिषद्' शब्द की व्याख्या करते हुए बताया है कि – ''जो मनुष्य भक्ति एवं श्रद्धा के साथ आत्मभाव से ब्रह्मविद्या को प्राप्त करता है, वह विद्या उनके जन्म, मरण, रोगादि अनर्थों को नष्ट करती है और अविद्या (अज्ञान) को नष्ट कर परब्रह्म को प्राप्त कराती है।''

उपनिषदों की संख्या के विषय में मतभेद पाया जाता हैं। 'मुक्तिकोपनिषद्' के अनुसार उपनिषदों की संख्या 108 और महाकाव्यकोष में 223 मानी गयी है। ऋग्वेद से सम्बन्धित 10, शुक्ल यजुर्वेद से सम्बन्धित 19, कृष्ण यजुर्वेद से सम्बन्धित 32, सामवेद से सम्बन्धित 16 तथा अथर्ववेद से सम्बन्धित 31 उपनिषद् है। शंकराचार्य ने उपनिषदों की संख्या 10 मानी है। मुक्तिकोपनिषद् में वर्णित प्रमुख उपनिषदों की सामान्य परिचय आपको दिया जायेगा, जो निम्नवत है–

''ईशकेनकठप्रश्नमुण्डमाण्डूक्यतितिरः।

ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा।।'' (मुक्तिकोपनिषद् 1.30)

वह है ईशावास्योपनिषद्, केनोपनिषद्, कठोपनिषद्, प्रश्नोपनिषद्, मुण्डकोपनिषद, माण्डूक्योपनिषद्, तैतिरीयोपनिषद्, ऐतरयोपनिषद, छान्दोग्योपनिषद् तथा बृहदारण्यकोपनिषद्। मुख्यतः उपरोक्त यह ही मुख्य उपनिषद् है जिन पर आदि शंकराचार्य का भाष्य भी मिलता है। इसके अतिरिक्त जब प्रमुख उपनिषद 11 माने जाते हैं तो उसमें 'श्वेताश्वतरोपनिषद्' की भी गणना की जाती है। हमारा मुख्य ध्येय है 'तैतिरीयोपनिषद्' के विशिष्ट भाग का अध्ययन करना। अतः हम अन्य उपनिषदों का सामान्य ज्ञान ही प्राप्त करेंगे।

13.4 प्रमुख उपनिषद्

1) **ईशावास्योपनिषद्** – उपनिषदों की श्रृंखला में सर्वप्रथम उपनिषद् 'ईशावास्योपनिषद्' है। पद्यात्मक यह उपनिषद लघुकाय है जो शुक्ल यजुर्वेद की काण्व शाखा का 40वॉ अध्याय है। 'ईशावास्योपनिषद्' में सर्वव्यापक परमतत्व का निरन्तर स्मरण करते हुए निष्काम भाव से कर्म करने का विधान किया है तथा तत्वज्ञान के फल का भी निरूपण किया गया है। परब्रह्म की प्राप्ति के साधन 'ज्ञान' को 'विद्या' तथा भौतिक सुखों की प्राप्ति के साधन 'कर्म' को 'अविद्या' नाम से बताया है और जो साधक ज्ञान और कर्म दोनों के तत्व को भली–भाँति समझकर, उनका अनुष्ठान करता है, वही साधक दोनों साधनों के द्वारा सर्वोत्तम तथा वास्तविक फल प्राप्त कर सकता है, अन्यथा नहीं। विद्या–अविद्या दोनों के

अनुष्ठान से विद्या (ज्ञान) द्वारा आनन्दमय परब्रह्म को प्रत्यक्ष जान लेता है और अविद्या (कर्मो) द्वारा जन्म और मुत्यु के बन्धन से छूट जाता है। शरीर त्याग के समय उपासक कहता है, हे प्रभु, आप अपने ऊपर पड़ा हुआ आवरण हटा दीजिए, जिससे मुझे आपका दर्शन प्राप्त हो सके।

18 मन्त्रों में निबद्ध इस उपनिषद का नामकरण इसके प्रथम मंत्र के आधार पर किया गया है –

''ईशावास्यामिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्'

यजुर्वेद के प्रत्येक अध्याय का उद्देश्य विशेष होता है उसी के अनुसार उसका नाम होता है। ईशावास्योपनिषद में ईश्वर की विद्या अथवा आत्मा का ज्ञान निरूपित है। इसलिए इसका नाम ईशावास्योपनिषद पड़ा है। इस उपनिषद् का प्रारम्भिक मंत्र ब्रह्म विद्या का सार कहा जा सकता है। इसमें बताया है कि समस्त जगत परमात्मा (ब्रह्म) से परिपूर्ण है, इस संपूर्ण जगत का कोई भी अंश परमात्मा से रहित नहीं है। अतः सांसारिक भोग विषयों का त्यागपूर्वक भोग करने की बात कही है।

2) केनोपनिषद्–

प्रस्तुत उपनिषद् सामवेद के 'तलवकार ब्राह्मण के अन्तर्गत आता है। तलवकार की 'जैमिनीय उपनिषद्' भी कहा जाता है और ब्राह्मण के अन्तर्गत होने से इसे ब्राह्मणोपनिषद्' भी कहते हैं। इस उपनिषद् के अनुसार परमतत्व (ब्रह्म) को समझना बहुत ही आवश्यक कार्य है। अतः उस परमतत्व को समझाने के लिए गुरू–शिष्य संवाद रूप में गूढ़ रहस्य का विवेचन किया गया है। चार खण्ड़ों में विभक्त केनोपनिषद् के प्रथम खण्ड़ में शिष्य द्वारा यह प्रश्न करने पर कि इन्द्रियों का प्रेरक तत्व कौन है ? गुरू शिष्य की बताते हैं कि सर्वप्रेरक तत्व परब्रह्म हैं। द्वितीय खण्ड़ में जीवात्मा को परमात्मा का अंश बताया गया है तथा ब्रह्मतत्व को इसी जन्म में जान लेने की आवश्यकता का प्रतिपादन किया है। तीसरे और चतुर्थ खण्ड में परब्रह्म परमात्मा को सबका प्रेरक, सबका कर्त्ता, परब्रह्म उपासना के प्रकार और फल बहुत ही उदात्त और गंभीर शैली में वर्णित है।

केनोपनिषद् में बताया है कि यदि इस देह में रहते उस ब्रह्म को जान लिया तो सुख है अन्यथा नहीं क्योंकि 84 लाख योनियों में भ्रमण करने के बाद मनुष्य योनि प्राप्त होती है। मनुष्य योनि में ही परमतत्व (ब्रह्म) को जाना जा सकता है। केनोपनिषद का अध्ययन करने के बाद पाठक को लगेगा मैंने ब्रह्य को जान लिया, यहाँ जान लेने का मतलब ज्ञान प्राप्त करने से नहीं है अपितु उसे व्यवहार में उतारने से भी है। जब साधक नित्य, अचल, अनन्त, परम आनन्द स्वरूप का चिंतन करता है तो वह आनन्दस्वरूप सर्वप्रिय परमात्मा का साक्षात्कार कर स्वयं भी आनंदमय हो जाता हैं।

3) कठोपनिषद्

कठोपनिषद् कृष्णयजुर्वेद की कठ शाखा से सम्बन्धित प्रसिद्ध उपनिषदों में से एक है। इस कठोपनिषद् का विभाजन दो अध्यायों में हुआ है और प्रत्येक अध्याय तीन–तीन वल्लियों में विभाजित है। कठोपनिषद् में नचिकेता और यम के संवाद का प्रसिद्ध उपाख्यान है। इसमें वाजश्रवस विश्वजित यज्ञ की समाप्ति पर अपना सर्वस्व दान करते हैं जिसमें उनके द्वारा बूढी, अशक्त गायें दान करते देख उनके

अबोध बालक नचिकेता के मन में प्रश्न उठता है कि इन असमर्थ गायों को दान करने का क्या औचित्य है ? क्योंकि दान लेने वाले को इन गायों को लेने से क्या लाभ मिलेगा ? यह गायें दूध देने में असमर्थ है, चारा भी नहीं खाती है इसलिए ऐसी गायों को प्राप्त कर कोई कैसे लाभान्वित होगा ? ऐसी स्थिति में वह अपने पिता से प्रश्न करता है कि आप मुझे किसे दान में देगें क्योंकि इस दान में सभी कुछ दान करने की परम्परा है, पिता उत्तर नहीं देते, बार–बार यही प्रश्न पूछने पर पिता क्रुद्ध होकर कहते हैं – ''तुझे मृत्यु को देता हूँ। यह सुनकर नचिकेता पिता वचनानुसार यमलोक चला जाता है। वहाँ यम नहीं होते हैं। आने पर यमराज को ज्ञात होता है कि उनकी अनुपस्थिति में कोई ब्राह्मण बालक तीन दिन और रात बिना अन्न और जल ग्रहण किये उनकी प्रतीक्षा करता रहा। यम फलस्वरूप नचिकेता से तीन वर माँगने को कहते हैं। नचिकेता प्रथम वर में अपने पिता की प्रसन्नता और दूसरे वर में स्वर्ग की प्राप्ति का साधन अग्निविज्ञान का रहस्य माँगता है, तीसरे वर में अबोध बालक आत्मज्ञान के रहस्य को जानना चाहता है कि मृत्यु के बाद क्या होता है ? आत्मतत्व कैसा है ? प्रथम और द्वितीय वर यमराज उसे प्रसन्न होकर देते हैं परन्तु आत्मज्ञान विद्वानों की बुद्धि अथवा हृदय रूपी गुफा मे छिपा गूढ़ रहस्य है जिसे बड़े–बड़े विद्वान नहीं जान पाये। यह छोटा बालक कैसे समझ पायेगा ? इसी कारण यम उसे तरह–तरह के प्रलोभन देते हैं परन्तु वह नचिकेता तो आत्मतत्व प्राप्ति का वर पाना चाहता है। यम उसकी परीक्षा लेते हैं तदुपरांत कठोपनिषद् के दूसरे अध्याय में उसे आत्मज्ञान देते हुए कहते हैं कि आत्मज्ञानी को अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण करना परम आवश्यक है। कोई भी ब्रह्म का अतिक्रमण नहीं कर सकता। सूर्य, चन्द्रमा तथा नक्षत्रगण जिससे प्रकाशित होते हैं वह ब्रह्म है, उसे ही अमृत कहते हैं। उस बह्म का कोई अतिक्रमण नहीं कर सकता। मनुष्य की जब सभी कामनाएँ नष्ट हो जाती हैं, अविद्या का नाश हो जाता है, तब मनुष्य अमर पद को प्राप्त करता है। इसी जन्म में ब्रह्म का साक्षात्कार कर ब्रह्म रूप हो जाता है। यमराज कहते हैं कि हृदय की सौ नाड़ियों में से एक सुषम्ना ब्रह्मरन्ध्र की ओर गई है। जिसके द्वारा ऊपर की ओर जाने वाला मनुष्य अमरतत्व (मोक्ष) को प्राप्त करता है। शेष नाडियाँ लोकान्तर गमन करने के लिए होती है। कठोपनिषद् में ब्रह्म विद्या को और सम्पूर्ण योग विधि को प्राप्त कर नचिकेता रात्रादि तथा मृत्यु के भय से रहित होकर ब्रह्म को प्राप्त हुआ।

4) प्रश्नोपनिषद्

प्रश्नोपनिषद् अथर्ववेद की पिप्पलाद शाखा के ब्राह्मण भाग के अन्तर्गत आता है। मुण्डोकपनिषद् में कहे हुए विषय की पूर्ति के लिए प्रश्नोपनिषद् है। इस उपनिषद् में जिज्ञासा निवारणार्थ सुकेशा आदि छः ऋषियों द्वारा छः प्रश्न पूछने पर पिप्पलाद ऋषि ने उत्तर दिया इसलिए इसका नाम प्रश्नोपनिषद् हो गया।

इस उपनिषद् के छः खण्ड़ है जो छः प्रश्न है। प्रथम प्रश्न में रयि और प्राण द्वारा प्रजापति से ही सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति की व्याख्या की गई है। इसमें भोक्ता अथवा प्रधान को 'प्राण' व भोग्य अथवा गौण को 'रयि' बताया है। यह 'प्राण' और 'रयि' जिसके आश्रित है उसे प्रजापति कहा है।

दूसरे प्रश्न में स्थूल देह को प्रकाशित करने वाला और धारण करने वाला प्राण को बताया है और समस्त इन्द्रियों द्वारा 'प्राण' की श्रेष्ठता का निरूपण किया है।

यह प्राण ही मृत्युकाल में मनुष्य के संकल्पानुसार उसे भिन्न–भिन्न लोकों में ले जाते हैं जो लोग प्राण के रहस्य को जानकर उसकी उपासना करते हैं वे ब्रह्मलोक में जाकर कर्ममुक्ति के भागी होते हैं। तीसरे प्रश्न में प्राण की उत्पत्ति और स्थिति पर विचार किया हैं। प्राण भी शासक की ही भाँति भिन्न–भिन्न अंगों में अपने ही अंग भूत अन्य प्राणों की नियुक्ति कर स्वयं उनका शासन करता हैं।

चौथे प्रश्न के उत्तर में कहा है कि आत्मा का सोपाधिक स्वरूप ही दृष्टा, श्रोता, विज्ञाता आदि है, इसका अधिष्ठान परब्रह्म हैं। उस ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त होने पर पुरूष उसी को प्राप्त हो जाता हैं।

पाँचवे अपर ब्रह्म (प्रतीक रूप) की उपासना करने वालों को कर्ममुक्ति और परब्रह्म (ओंकार) की उपासना करने वालों को परब्रह्म की प्राप्ति बताई है और एक, दो और तीन मात्राओं की उपासना से प्राप्त होने वाले भिन्न–भिन्न फलों का निरूपण किया है।

सुकेशा के अन्तिम प्रश्न का उत्तर देते हुए पिप्पलाद ने मुक्तावस्था में प्राप्त होने वाले निरूपाधिक ब्रह्म का वर्णन किया है। प्रस्तुत उपनिषद् का ध्येय यही है कि तत्व ज्ञान की योग्यता प्राप्त हो सके। जिससे आसानी से तत्वज्ञान ग्रहण हो सके।

5) मुण्डकोपनिषद्

मुण्डकोपनिषद् अथर्ववेद की शौनकी शाखा में है। इसमें तीन मुण्डक है, और एक–एक मुण्डक के दो–दो खण्ड़ है। शौनकादि ने विधिवत अंगिरा मुनि के पास जाकर प्रश्न किया कि ''भगवन् ! ऐसी कौन सी वस्तु है जिस एक को जान लेने पर सब कुछ जान लिया जाता है ? महर्षि अंगिरा ने परा और अपरा नामक दो विद्याओं का निरूपण किया, जिसमें ऐहिक, अनात्म पदार्थों का (भौतिक पदार्थ) ज्ञान कराने वाली 'अपरा विद्या' तथा अखण्ड़, अविनाशी, परमार्थतत्व का ज्ञान कराने वाली विद्या 'परा विद्या' कहलाई जाती है। मुण्डकोपनिषद् में एक वृक्ष पर परस्पर मित्रता रखने वाले दो पक्षी रहते हैं। यह दोनों पक्षी जीवात्मा और परमात्मा है दोनों शरीर रूप वृक्ष का आश्रय लेते हैं। यथा –

''द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनष्नन्यो अभिच।।'' (मुण्डकोपनिषद् 3.1.1)

अर्थात् उपरोक्त मंत्र का सार यह है कि मनुष्य शरीर मानो एक वृक्ष है। इस शरीर रूपी वृक्ष में ईश्वर और जीव (दो मित्र पक्षी) शरीर रूपी वृक्ष में हृदय (घोंसले) में साथ–साथ रहते हैं। जीव अर्थात् जीवात्मा तो कर्मो के फलों का भोक्ता है जबकि ईश्वर कर्मफलों से सम्बन्धित न होकर केवल देखता रहता है। इसी प्रकार श्रीमद्भगवदगीता में भी जगत को अश्वत्थ (पीपल) वृक्ष बताया है, प्रस्तुत मन्त्र में शरीर पीपल वृक्ष, जीवात्मा और परमात्मा दो पक्षी रूप में वर्णित है।

मुण्डकोपनिषद् में ब्रह्म की सर्वव्यापकता का वर्णन बहुत ही सुन्दर तरीके से किया है कि अमृतस्वरूप परबह्म ही सामने हैं, वही पीछे है, वही दाएँ वहीं बाएँ, वही नीचे, वही ऊपर की ओर तथा वही ब्रह्म चारों ओर फैला है। सभी जगह वह सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म व्याप्त है। ब्रह्म ही संसार का निमित्त (सहयोगी कारण) और उपादान कारण (आधारभूत) है जैसा कि निम्न मन्त्र में भी कहा है कि –

यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च

यथा पृथिव्यामोषधय. सम्भवन्ति।

यथा सतः पुरूषात्केशलोमानि

तथाक्षरात्सम्भवतीह विश्वम्।। (मुण्डकोपनिषद् 01–01–07)

अर्थात् मन्त्र में तीन उदाहरणों द्वारा यह बात बताई गई है कि जड़–चेतनात्मक सम्पूर्ण जगत का कारण ब्रह्म ही है। पहला उदाहरण जिस प्रकार मकड़ी स्वयं अपनी लार द्वारा जाले का निर्माण करती है और स्वयं ही उसे निगल जाती है, दूसरे उदाहरण द्वारा बताया है जैसे पृथ्वी में अन्न, तृण, वृक्ष, लता (औषधियों) आदि उत्पन्न होते हैं, तीसरे उदाहरण द्वारा कहा है कि जिस प्रकार मनुष्य के जीवित शरीर में केश, रोएँ, नाखून स्वतः ही उत्पन्न होकर बढ़ते हैं, उसके लिए कोई कार्य नहीं किया जाता है, ठीक उसी प्रकार परब्रह्म परमेश्वर से यह सृष्टि स्वभाव से उत्पन्न होती है और विस्तार को प्राप्त होती है। परम तत्व को सृष्टि निर्माण के लिए कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता है। तीन दृष्टान्तों के माध्यम से बहुत ही सुन्दर व बोधगम्य शैली में ब्रह्म को जगत का कारण घोषित किया है। मुण्डकोपनिषद् के (3.2.8)। एक अन्य मंत्र में कहा है कि जिस प्रकार नदियाँ प्रवाहित होती हुई नाम और रूप से रहित होकर समुद्र में विलीन हो जाती है ठीक उसी प्रकार नाम, रूप से मुक्त हुआ जीव परमतत्व में ही लीन हो जाता है। जीवात्मा और परमात्मा में अभेद की बात अन्य उपनिषदों में भी कही गई है। आत्मा अजर, अमर है। ऐसा ज्ञान प्राप्त होने पर मनुष्य के ह्रदय की ग्रन्थियाँ (गाँठें) खुल जाती है, सारे संशय दूर हो जाते हैं और शुभ–अशुभ कर्म भी नष्ट हो जाते हैं। उसके द्वारा किए कार्य बन्धन का कारण नहीं बनते है। इस प्रकार ज्ञान प्राप्ति से लेकर मृत्युपर्यन्त मध्य की अवस्था जीवन्मुक्तावास्था कहलाती है। उपनिषदों के अनुसार मनुष्य ब्रह्म प्राप्ति या मोक्ष प्राप्ति इसी संसार में और इसी जीवन में ही कर सकता है।

"सत्यमेव जयति नानृतं" (मुण्डकोपनिषद् 3 मुण्डक, प्रथम खण्ड 06)

अर्थात् ''सत्य की ही जीत होती है झूठ की नहीं। परमात्मा सत्य स्वरूप है अतः परम तत्व (परमात्मा) की प्राप्ति का साधन ''सत्य'' अनिवार्य तत्व हैं। यही पंक्ति 'सत्यमेव जयते' भारतीय न्यायालयों में भी अंकित होती है।

6) माण्डूक्योपनिषद्

माण्डूक्योपनिषद् अथर्ववेदीय ब्राह्मणभाग के अन्तर्गत आता है जिसमें 12 मंत्र है। कलेवर की दृष्टि से दस उपनिषदों में सबसे कम मंत्र इसी उपनिषद् में है। गौडपादाचार्य ने इस पर कारिकाएँ लिखकर इसके महत्व को और अधिक बढ़ा दिया है। इस ग्रन्थ में चार प्रकरण है। आगम प्रकरण ,वैतथ्य प्रकरण, अद्वैत प्रकरण और अलातशन्ति प्रकरण जिसमें 29, 38, 48, और 100 कुल 215 कारिकाएँ है। प्रथम प्रकरण का नाम 'आगम प्रकरण' है जिसमें जगत की उत्पत्ति के अनेक प्रयोजनों का वर्णन कर खण्डन किया है।

यह उपनिषद् अद्वैतवाद का पोषक है। प्रस्तुत उपनिषद् मे भी अद्वैतवाद की स्थापना की है। जिस समय अनादि माया से सोया हुआ जीव जागता है उसी समय से उसे अजन्मा तथा स्वप्न और निद्रा से रहित अद्वैततत्व का बोध होता है। आगम प्रकरण में जीव और ब्रह्म की एकता तथा प्रपजय को माया से युक्त

माना है माया के ही कारण आत्मतत्व में भेद प्रतीत होता हैं। यह माया न सत् है न असत् है, न सदसत् है, न भिन्न है, न अभिन्न है और न भिन्न–भिन्न है, न सावयव है न निरवयव है, न उभयरूप। वास्तव में स्वरूप विस्मृति ही माया है, स्वरूप ज्ञान से माया की निवृति होती है जैसे – अंधेरे में रज्जु सर्पवत् भासित होता है परन्तु रज्जु (रस्सी) का वास्तविक ज्ञान होने पर वह रज्जुरूप ही रह जाती है माया द्वारा उत्पन्न सर्प का नाश हो जाता है उसी प्रकार जीव को द्वैत की प्रतीति होती है, माया का पर्दा हटते ही एक भाग अखण्ड अद्वैत वस्तु ही अवशिष्ट रह जाती हैं। 'वैतथ्य प्रकरण' में द्वैत भाव का प्रतिपादन कर उसे (द्वैत को) मनोदृश्य मात्र बताया हैं। जो भी भेद है वह व्यवहार दृष्टि से है, परमार्थतः उसकी गन्ध भी नहीं है। 'अद्वैत प्रकरण' में बताया है कि वह ब्रह्म जन्म रहित, निद्रारहित, स्वप्न शून्य, नामरूप रहित, नित्य प्रकाश स्वरूप और सर्वज्ञ, चिंतन रहित, अचल और निर्भय आदि विशेषताओं वाला है।

'अलातशन्ति' नामक चौथे प्रकरण में बताया है कि 'अलात' का तात्पर्य है – 'मशाल' अथवा 'उल्का'। मशाल को घुमाने पर अग्नि की तरह–तरह की आकृतियाँ दिखाई देती है, मशाल घुमाना रोकने पर आकृतियाँ बन्द हो जाती है। अग्नि की चिंगारियाँ दिखना मशाल के स्पन्दन का फल है, उसी प्रकार यह दृश्य प्रपंच मन के स्पन्दन के कारण प्रतीत होते हैं। प्रपंच की अप्रतीति और प्रतीति दोनों भ्रान्तिजनित है, वास्तविक रूप में न उसकी उत्पत्ति होती है और न लय। इस भ्रान्ति का आधार है 'परब्रह्म' क्योंकि कोई भी भ्रान्ति निराधार नहीं होती है।

7) ऐतरेयोपनिषद्

ऋग्वेद में ऐतरेय आरण्यक में दूसरे आरण्यक के चौथे, पाँचवे और छठें अध्यायों को ऐतरेय उपनिषद् कहा जाता है क्योंकि इन तीनों अध्यायों में ब्रह्म विद्या की प्रधानता है। इस उपनिषद् में तीन अध्याय हैं। उनमें से पहले अध्याय में तीन खण्ड़ और दूसरे, तीसरे अध्यायों में एक–एक खण्ड़ हैं। प्रथम अध्याय के अनुसार सृष्टि के आरंभ में केवल एक परब्रह्म परमात्मा था उसने विचार किया कि प्राणियों के कर्मफल भोगों के लिए भिन्न–भिन्न लोकों की रचना करूँ। तब परमतत्व ने अम्भ (द्युलोक तथा उसके ऊपर के लोक), मरीचि (अंतरिक्ष), मर (मृत्युलोक) और जल (पृथ्वी के नीचे के लोक) इन लोकों की रचना की तत्पश्चात् इन लोकों की रक्षा करने वाले लोकपालों की रचना भी मुझे अवश्य करनी चाहिए। ऐसा विचार कर उसने जल से हिरण्यमय पुरूष को निकालकर अवयववयुक्त किया। उस पुरूष में ही पाँच ज्ञानेन्द्रिय (दो आँखें, दो कान, जिह्वा, रसना त्वक् (त्वचा) पाँच कर्मेन्द्रियाँ – हाथ (दो हाथ), पैर (दो पैर), पाद, पायु, उपस्थ और उभयवादी इन्द्रिय मन की उत्पत्ति की गई। इन्द्रियों के साथ–साथ इन्द्रियों के देवताओं की भी रचना की गई। परब्रह्म परमात्मा द्वारा रचे गये इन्द्रियों के अधिष्ठाता अग्निादि देवताओं के प्रार्थना करने पर कि आप हमें (इन्द्रियों को) कोई आयतन (स्थान) प्रदान कीजिए, जिसमें स्थित होकर हम अन्न भक्षण कर सके। फलस्वरूप परब्रह्म ने उन्हें गो शरीर, फिर अश्व शरीर बनाकर दिखाया परन्तु उन्हें सन्तुष्टि नहीं मिली। मनुष्य शरीर की सभी देवताओं द्वारा स्वीकृति मिलने पर परब्रह्म की आज्ञा से सभी देवता इन्द्रियों के रूप में शरीर में विभिन्न स्थानों पर प्रविष्ट हो गये। इस प्रकार विचार करने से लेकर विविध

देवताओं के शरीर में प्रविष्ट होने तक जो सृष्टिक्रम बताया है उसे 'ईश्वरसृष्टि' कहा है।

दूसरे अध्याय में आत्मज्ञान को परमपद प्राप्ति का एकमात्र साधन बताकर तीसरे अध्याय में उसी का प्रतिपादन किया है कि हृदय, मन, संज्ञान (सम्यक् ज्ञान शक्ति) आज्ञान (आज्ञा देने की शक्ति), विज्ञान (विशिष्ट रूप से जानने की शक्ति), प्रज्ञान (तत्काल जानने की शक्ति), मेधा (धारण शक्ति), दृष्टि (देखने की शक्ति), धृति (धैर्य), मति (बुद्धि), मनीषा (मनन शक्ति), जूति (वेग), स्मृति (स्मरण शक्ति), संकल्प (संकल्प शक्ति), क्रतु (मनोरथ शक्ति), असु (प्राणशक्ति), काम (काम शक्ति), और वश (स्त्री संसर्ग की अभिलाषा) – ये सभी 'प्रज्ञान' के ही नाम हैं। यह सम्पूर्ण संसार प्रज्ञान में स्थित है। प्रज्ञान ही ब्रह्म हैं, जिसने इस प्रकार 'प्रज्ञान स्वरूप' परमतत्व को जान लिया वह शरीर त्याग कर सदा के लिए जन्म और मृत्यु के बन्धन से छूट जाता है। ब्रह्म का सार्वात्म्य प्रतिपादन करना ही इस उपनिषद् का उद्देश्य है।

8) तैत्तिरीयोपनिषद्

तैत्तिरीयोपनिषद् कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा के अन्तर्गत तैत्तिरीय आरण्यक का एक भाग है। तैत्तिरीय आरण्यक के दस अध्यायों में से सातवें, आठवें और नौवें अध्यायों को ही तैत्तिरीय उपनिषद् कहा जाता है। यह उपनिषद् तीन अध्यायों में विभक्त है –

पहला अध्याय शिक्षावल्ली, दूसरा अध्याय ब्रह्मवल्ली अथवा ब्रह्मानन्दवल्ली और तीसरा अध्याय भृगुवल्ली कहलाता है। इन्हें शिक्षाध्याय, ब्रह्मवल्ल्यध्याय और भृगुवल्ल्यध्याय भी कहते हैं। उपनिषद् के प्रथम अध्याय शिक्षाध्याय के अनुसार जीवन यापन करने वाला व्यक्ति इहलोक और परलोक में श्रेष्ठ फलों को प्राप्त करता हुआ ब्रह्मविद्या प्राप्त करने में भी सफल होता हैं।

भूः (प्राण), भुवः (अपान), स्वः (व्यान), महः (अन्न) जो साधक इनको जान लेता है वह ब्रह्म को जान लेता है। ओउम् ब्रह्य है यह ओउम् ही प्रत्यक्ष दिखाई देने वाला सारा जगत है।

ओउम् की महिमा सभी दर्शनों द्वारा स्वीकार्य है। यदि कोई साधक ओउम् बोलकर ब्रह्म की प्राप्ति की इच्छा से अध्ययन कार्य आरंभ करता है तो वह निःसंदेह ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है।

- तैत्तिरीयोपनिषद् के प्रमुख सद्विचार–
- सत्यंवद / धर्मं चर / स्वाध्यायान्मा प्रमदः।
- सदा सत्य बोलो / धर्म का आचरण करो / स्वाध्याय से कभी मत चूको।
- मातृदेवो भव / पितृदेवो भव / आचार्यदेवो भव / अतिथि देवो भव।
- (माता को देव तुल्य समझो / पिता को देवतुल्य समझो / आचार्य को देव तुल्य समझो / अतिथि को देव तुल्य समझो।)

सत्पुरूषों के उच्च आचरण का अनुसरण करना चाहिए। यही वेदों का रहस्य है। अन्न की उपेक्षा अथवा निरादर नहीं करना चाहिए। घर पर आये अतिथि की कभी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। तैत्तिरीयोपनिषद् की प्रमुख बातों को यहाँ बताया गया है। पाठ्यक्रम में तैत्तिरीयोपनिषद् की भृगुवल्ली का अध्ययन हमें आगे की इकाईयों में करना है।

9) छान्दोग्योपनिषद्

छान्दोग्योपनिषद् सामवेदीय तलवकार ब्राह्मण के अन्तर्गत आता है। इस उपनिषद में आठ अध्याय है जिसमें प्रथम अध्याय में विविध प्रकार की विद्या, साम, ओंकार का वर्णन, द्वितीय अध्याय में शैव उदगीथ, तृतीय अध्याय में सूर्योपासना, गायत्री वर्णन और अंगीरस द्वारा श्रीकृष्ण की अध्यात्म शिक्षा और अण्ड से सूर्योत्पत्ति का वर्णन है। चतुर्थ अध्याय में सत्यकाम जाबाल कथा का वर्णन, पंचम में जैबलि के दार्शनिक सिद्धान्त व सृष्टि सम्बन्धित तथ्य वर्णित है। षष्ठ अध्याय में आरूणि की दार्शनिकता का रोचक वर्णन, सप्तम् अध्याय में सनत्कुमार और नारद का अष्ट्म अध्याय में आत्मावगति के व्यवहारिक उपायों को बताया गया है। यह उपनिषद् बहुत गंभीर, प्राचीन व प्रौढ़ उपनिषद् है। विश्व के सूर्य ब्रह्म को इसी तृतीय अध्याय में बताया है और **सर्वं खल्विदं ब्रह्म** भी इसी अध्याय में है।

अद्वैतवेदान्तानुसार जीव तीन दोषों से आवृत है। सर्वप्रथम है मल अर्थात् अन्तःकरण के मलिन संस्कार जनित दोष। इनकी निवृत्ति होती है, निष्काम कर्मों के द्वारा, दूसरा दोष है चित की चंचलता। चित्त की चंचलता को दूर करने का उपाय है – उपासना। तीसरा दोष है आवरण – वास्तविक स्वरूप को अज्ञान द्वारा आवृत करना (ढ़कना), इसकी निवृत्ति, का उपाय है ज्ञान। साधक को संस्कार रहित होकर, निष्काम कर्मों द्वारा ज्ञान प्राप्ति द्वारा ही आत्मसाक्षात्कार होता है। यद्यपि मोक्ष का साक्षात् साधन ज्ञान ही है तथापि कर्म और उपासना भी उसके साधन है, जिसे प्राप्त कर संसार और संसार बन्धन का अत्यन्ताभाव होकर सर्वत्र एक अखण्ड चिदानन्दधन सत्ता ही रह जाती है।

'छान्दोग्योपनिषद्' में उपासना और ज्ञान का 'समुच्चय' है। उपनिषद् की वर्णन शैली क्रमबद्ध व युक्तियुक्त है। जिसमें मुख्य आदर्श भी दृष्टिगोचर होते हैं यथा

1) मनुष्य आचार सम्बन्धी नियमों की उपेक्षा तभी करे जब उसके बिना प्राणरक्षा का कोई दूसरा उपाय न हो।
2) यदि उत्कृष्ट विद्या किसी ब्राह्मण से अतिरिक्त किसी द्विजाति के पास हो तो उसे ग्रहण किया जा सकता है।
3) व्यक्ति को अपने कर्तव्य कर्मों का उचित रीति से पालन करना आवश्यक है।

10) बृहदारण्यकोपनिषद्

बृहदारण्यकोपनिषद् कलेवर तथा ब्रह्मज्ञान प्रतिपादन दोनों तरह से ही अद्भुत व विस्तृत है। इस उपनिषद् में छः अध्याय हैं। उस समय में याज्ञवल्क्य बहुत ही तत्वज्ञानी और विद्वान थे। उनकी आध्यात्मिक दार्शनिक शिक्षा से सम्बन्धित इस उपनिषद् में संवाद माध्यम द्वारा कठिन विषय को आसान बनाने का प्रयास किया है। जिसमें से कुछ संवाद निम्नलिखित है :–

आत्मा के स्वरूप निरूपण में गार्ग्य और अजातशत्रु के मध्य संवाद, तत्वज्ञान शिक्षा को ग्रहण करते हुए याज्ञवल्क्य और जनकसंवाद, ब्रह्म की सर्वव्यापकता के उपदेश में याज्ञवल्क्य और मैत्रेयी संवाद इत्यादि।

याज्ञवल्क्य तत्वज्ञाता थे उनकी दो पत्नियाँ थी कामायनी और मैत्रेयी। इन दोनों के मध्य ब्रह्मज्ञान सम्बन्धी संवाद महत्वपूर्ण हैं। बृहदारण्यकोपनिषद् आध्यात्मिक दार्शनिक उपदेश देने वाला बेजोड़ नमूना है।

बोध प्रश्न/ अभ्यास प्रश्न

बोध प्रश्न – 01

निम्न प्रश्नों के सही उत्तर पर सही (✓) का निशान लगाइए और अन्त में दिये उत्तर से मिलान कीजिए ।

क) वैदिक वाड्.मय के अंतिम भाग कहलाते हैं। (संहिता/ उपनिषद्)

ख) उपनिषदों की कुल संख्या कितनी है। (130/ 108)

ग) अंतिम पुरूषार्थ क्या है ? (अर्थ/ मोक्ष)

घ) सर्वप्रथम कौन–सा उपनिषद् आता है। (ईशावास्योपनिषद्, केनोपनिषद्)

ड़.) उपनिषदों में वर्णित है। (ब्रह्मज्ञान/ पुराण ज्ञान)

बोध प्रश्न – 02

मिलान कीजिए –

उपनिषद् का नाम		**सम्बन्धित वेद**
1) ईशावास्योपनिषद्	(i)	अथर्ववेद
2) केनोपनिषद्	(ii)	कृष्ण यजुर्वेद
3) मुण्डकोपनिषद्	(iii)	शुक्ल यजुर्वेद
4) तैतिरीयोपनिषद्	(iv)	सामवेद

बोध प्रश्न – 03

नीचे दिए गए प्रश्नों का सही उत्तर दीजिए –

1) कठोपनिषद् में 'यज्ञवेदी का ज्ञान' किस वर में मांगा –

(i)द्वितीय (ii)तृतीय (iii)सप्तम (iv)प्रथम

2) तैत्तियोपनिषद् में कुल कितनी वल्लियाँ है –

(i)दो (ii)तीन (iii)चार (iv)पाँच

3) 'सत्यमेव जयते' किस उपनिषद् से लिया है?

(i)माण्डूक्योपनिषद् (ii) छान्दोग्योपनिषद्

(iii)मुण्डकोपनिषद् (iv)केनोपनिषद्

4) 'द्वा सुपर्णासयुजा' मन्त्र किस उपनिषद् से सम्बन्धित है –

(i)मुण्डोकोपनिषद् (ii)प्रश्नोपनिषद्

(iii)ईशावास्पोनिषद् (iv)कठोपनिषद्

बोध प्रश्न – 04

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1) तैत्तिरीयोपनिषद् के प्रथम अध्याय का नाम ..... है।

2) ब्रह्म की समीपता से प्राप्त ज्ञान ..... है।

3) कठोपनिषद् ..... से सम्बन्धित है।

4) ..... ही संसार का कारण हैं।

5) वेदान्त सूत्र का अन्य नाम ..... है।

अभ्यास प्रश्न –

1) नचिकेता किस उपनिषद् में है ?

2) प्रमुख उपनिषद् कौन–कौन से हैं ? नाम लिखो।

13.5 सारांश

उपर्युक्त विवेचन द्वारा स्पष्ट हो गया है कि उपनिषद् क्या है ? प्रमुख उपनिषदों से आपका परिचय हो गया है। उपनिषद् ही समस्त भारतीय दर्शनों के मूल स्रोत है यदि हम दर्शन विषय में प्रविष्ट होने की इच्छा रखते हैं तो उपनिषदों का ज्ञान आधार स्वरूप हैं। मानव सदा दुःखों से पीड़ित होता रहता है इसलिए वह चिरस्थायी सुख को खोजता रहता है, यह परमशान्ति उपनिषदों के ज्ञान में निहित है। वेद जीव की कर्म, उपासना और ज्ञान के पथ पर आगे बढ़ाते हैं और कहते हैं, व्यक्ति जहाँ है, वहीं अपने धर्मों को कुशलतापूर्वक करता हुआ स्वाभाविक रूप से आगे बढ़ता जाए, यही उपनिषदों की सीख है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप उपनिषद् जैसे गूढ़ विषय को समझ गए होंगे कि उपनिषदों का प्रतिपाद्य क्या है, कौन–सा उपनिषद् किस वेद से सबन्धित है क्योंकि प्रत्येक उपनिषद् किसी न किसी वेद से सम्बन्धित है। अभी तक आप उपनिषदों के कलेवर से भली–भाँति परिचित हो गये होंगे, जो आगे की इकाईयों में वर्णित तैत्तिरीयोपनिषद् (भृगुवल्ली) को समझने में सहायक होगा।

13.6 शब्दावली

उपनिषद्	–	गुरू के समीप बैठकर सीखी जाने वाली विद्या।
आत्मज्ञान	–	आत्मा सम्बन्धित ज्ञान।
वेदान्त	–	वैदिक वाड्.मय का अंतिम भाग वेदान्त (उपनिषद्)
रहस्य	–	छिपा हुआ, गुप्त।

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें –

1) तैत्तिरीयोपनिषद् – गीता प्रेस, गोरखपुर।

2) ईशादि नौ उपनिषद् – गीता प्रेस, गोरखपुर।

3) संस्कृत साहित्य का इतिहास (वैदिक खण्ड़), डॉ. प्रीति प्रभा गोयल, राजस्थानी ग्रन्थकार, जोधपुर (राज.)।

4) संस्कृत साहित्य का इतिहास – ए.बी. कीथ (अनुवादक – डॉ. मंगलदेव शास्त्री), मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली।

5) ईशावास्योपनिषद् गीताप्रेस, गोरखपुर।

6) प्रश्न उपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुर।

7) कठ उपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुर।

8) मुण्डक उपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुर।

9) माण्डूक्य उपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुर।

10) छान्दोग्य उपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुर।

11) केन उपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुर।

12) ऐतरयोपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुर।

13) बृहदारण्यकोपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुर।

13.8 बोध प्रश्नों / अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न – 01

क) उपनिषद्

ख) 108

ग) मोक्ष

घ) ईशावास्योनिषद्

ड.) ब्रह्मज्ञान

बोध प्रश्न – 02

1) (iii) शुक्लयजुर्वेद

2) (iv) सामवेद

3) (i) अथर्ववेद

4) (ii) कृष्ण यजुर्वेद

बोध प्रश्न – 03

1. (i) द्वितीय 2. (ii) तीन 3. (iii) मुण्डकोपनिषद् 4. (i) मुण्डकोपनिषद्

बोध प्रश्न – 04

1) शिक्षावल्ली/शिक्षाध्याय 2. उपनिषद् 3. यजुर्वेद 4. ब्रह्म 5. ब्रह्मसूत्र

अभ्यास प्रश्न –

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।